ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
ISSN No.: 2347-2944, RNI:UPBIL04292, REG. No.: 561/2013-2014 Vol.-1, No.-1, PP-275-277,YEAR-2013

वर्तमान शिक्षा व्यवस्था में छात्र की भूमिका

❑ **डॉ0 जेनुल आविदीन**

अतीत काल में भारत देवताओं और मानवों की जीवन स्थली व देवस्थली माना जाता रहा है, जहां पर जन्म लेना गौरव की बात मानी जाती है, अभाव व विपलता के बावजूद हमारे पूर्वजों ने जो संसाधन बनाये व संस्कृति की संरचना की वह न केवल आज की पीढ़ी के लिए प्रेरण स्रोत है, बल्कि अतीत के स्वर्णिम गौरव का अभास कराती है। संस्कारों से आभूषित जीवन प्रक्रिया ही, योग्य समाज व योग्य नागरिक तैयार कर सकती है। अपने देश का अतीत इसी कारण उज्ज्वल रहा है, उस समय की शिक्षा प्रणाली व मूल्यांकन के तरीकें ही कुछ अलग प्रकार के थे, कि बालक अनिवार्य रूप से सभ्य व संस्कारी बन सके शिक्षा की सार्थकता भी इसी में है कि बालक के लिए अनुकूल वातावरण हो। अनुकरणीय वृत्ति होने के नाते बालक को ऐसा वातावरण चाहिये, जिससे सद्गुणों का विकास निरंतर होता रहे। पठन–पाठन, अध्ययन, चिंतन का क्रम ऐसा बने रहना चाहिये, कि उसके चेतना का स्तर सुविकसित होता रहे। संस्कारों की सम्पन्नता के कारण चाणक्य जैसा कुरूप, अष्टावक्र जैसा अपंग और सुदामा जैसा दरिद्र व्यक्ति भी समाज में सम्मान पाता रहा है। वे अपने जीवन के किसी क्षेत्र मे हार नही माने निरंतर आगे बढ़ते रहे।

शिक्षा जीवन पर्यन्त चलने वाली प्रक्रिया है जो मनुष्य के जीवन को बेहतर बनाने का सर्वाधिक महत्वपूर्ण साधन है शिक्षा के द्वारा व्यक्ति अपनी समस्याओं का हल खोजता है, उसे अपने अधिकारों एवं कर्तव्यों का ज्ञान होता है। व्यक्ति के सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक विकास में शिक्षा का महत्वपूर्ण योगदान होता है। शिक्षा के महत्व को स्वीकार करते हुए देश के सभी नागरिकों को शिक्षा प्राप्त करने को प्रेरित किया जाता रहा है।

वर्तमान प्रचलित शिक्षा व्यवस्था में शिक्षा का उद्देश्य केवल अक्षर ज्ञान कराना ही नहीं रह गया है, बढ़ती जनसंख्या के कारण परिवर्तित समाज व अर्थव्यवस्था की स्थिति का तकाजा है कि अब मानवीय शक्ति का समग्र विकास किया जाए। शिक्षा को सर्वभौम बनाया जाए, जिससे वे सामाजिक व सांस्कृतिक परिवर्तन के लिये सक्रिय भागीदारी कर सके। अपने अतीत के गौरव को पुनः स्थापित करने के लिए हमें सुसंस्कारिता का वातावरण पुनः स्थापित करना होगा, इसके लिये व्यक्ति को सुदृढ़ आकर्षक बनाने वाली शिक्षा प्रणाली को पुनः नये तरीके से स्थापित करना होगा, तभी ऐसे बालक का विकास होगा जिनका कार्य क्षेत्र सज्जनता व शालीनता से भरा होगा, उनके सामने एक ऐसा चिंतन होगा जिसमें आदर्शवादिता कार्य व व्यवहार दोनों झलकेगा। उसमें एक दूसरे को ऊंचा उठाने, गैरों के लिये समय निकालने, आगे बढ़ने, व जीवन मूल्यों को धारण करने की क्षमता स्वतः आ जाएगी।

आज की परिपाटी में जीवन की सफलता का उद्देश्य क्लर्क, अधिकारी, व्यापारी या डाक्टर, इंजिनियर बनना रह गया है स्कूल, कॉलेजों का वातावरण भी इसी तरह का तैयार किया गया है शिक्षा के प्रचलित उपक्रम में यह कहीं नहीं बताया जाता कि जीवन का क्षेत्र कितना व्यापक व बड़ा है इसे ठीक से समझने और उच्च उपलब्धियों को प्राप्त करने के लिये सोचने व करने का सही तरीका क्या होगा, इसके लिये क्या करना चाहिये ?

एम0 कॉम0 एम0 एड0, पी0–एच0 डी0– शिक्षाशास्त्र, श्री गोविंद महाविद्यालय तेवरखास, बिलारी, मुरादाबाद (उ0प्र0) भारत

सभी शैक्षणिक संस्थाएं परीक्षा प्रणाली में विश्वास करते है। बौद्धिक कुशलता के आधार पर उन्हें श्रेणी प्रदान कर दी जाती है कि प्राप्त अंकों के आधार पर छात्र के स्तर का वर्गीकरण किया जाता है जिसे कम अंक मिलता है, उसमें उच्च अंक प्राप्त करने वाले की अपेक्षा हीनता का बोध होता है।

इस प्रकार छात्रों में आपस में ही ऊंच–नीच की भावना आ जाती है, इसका बालकों पर बहुत ही खराब प्रभाव पड़ता है। मस्तिष्क का एक अंश प्राकृतिक ढंग से विकसित हो जाने के कारण कोई छात्र बहुत अच्छा प्रदर्शन करता है और उच्च क्षेणी में उत्तीर्ण होता है किन्तु जीवन के अन्य क्षेत्रों में उसका स्तर अपेक्षानुरूप न हो सका तो क्या ये बालक की श्रेष्ठता का निर्धारण सिर्फ परीक्षाओं के आधार पर निर्धारित करना उचित है? आज देश विदेश के समाज में उच्च स्तर के शिक्षकों, विशेषज्ञों, नीति निर्देशकों, राजनीतिज्ञों की कमी नहीं है, फिर भी वहीं समाज दिन–प्रतिदिन, अशांत, असंतुष्ट, उदास, दिशाविहीन, उद्देश्यहीन व अविश्वसनीय जीवन प्रणाली में क्यों भटक रहा है यह एक विचारणीय तथ्य है।

भारत एक वो राष्ट्र जिसे विश्व गुरू की प्रतिष्ठा प्राप्त है, जितना बड़ा राष्ट्र है उतना ही प्राचीन इसका इतिहास है यह वही देश है जहां विज्ञान, गणित, खगोल, आयुर्वेद व ज्योतिषशास्त्र जैसे अनेक अलौकिक ज्ञान व विधा पैदा हुयी थी।

आदि सनातन धर्म से शुरू हो कर महावीर स्वामी से जैन धर्म, गौतमबुद्ध से बौद्धधर्म, नानक देव से सिख धर्म की स्थापना इसी धरती पर हुयी।

जिस समाज में लोगों में अधिकतम अर्जित करने की इच्छाशक्ति होगी वहीं परिश्रमी, उद्यमी, साहसी लोग होंगे जो तीव्र आर्थिक विकास के लिये मार्ग प्रशस्त करेगे। इस अवधारणा ने समाज के सभी अर्थशास्त्रियों, इतिहासकारों, व समाजशास्त्रियों व शिक्षाशास्त्रियों को प्रभावित किया। डार्विनवाद की यह मान्यता रही कि व्यक्ति जो कुछ भी है या हो सकता है, वह अपने प्राकृतिक पर्यावरण से सफल अनुकूलन के कारण है। मार्क्स ने अपने आर्थिक निर्धारणवाद में आर्थिक दशाओं को सामाजिक घटनाओं के लिये जिम्मेदार माना। फ्रायड ने संवेगीय इच्छाओं को प्रत्येक क्रिया कलाप के लिये जिम्मेदार माना। वहीं मैक्सीलैंड ने यह सिद्ध करने का प्रयास किया कि विचार से ही समाज गतिशील है। विचार ही विकास का मार्ग निर्धारित करती है, देश के विकास के लिये अनुकूल मनोवृत्ति और प्रेरणा, अर्जित या कुछ प्राप्त करने की आवश्यकता तथा इसके लिये लोगों को प्रेरित किया जाना आवश्यक है। यहुदियों को देखा जाए, उनमें अपने समुदाय को सर्वश्रेष्ठ समुदाय बनाने की इच्छा शक्ति रही, इन्ही कारणों से वो विकसित और आधुनिकीकृत हुए, उन्होंने अत्यधिक परिश्रम एवं अधिक प्राप्त करने की इच्छा के बल पर विकास का उच्च स्तर प्राप्त किया।

आज हमें ऐसे मजबूत इच्छा शक्ति वाले दृढ़ निश्चयी व्यक्तित्व को जरूरत है, हमें स्वामी विवेकानन्द जैसी विचारधारा का प्रखर नेतृत्व चाहिये शिक्षा पद्धति रोजगार परक व स्वावलम्बन आधारित होना चाहिए। अंग्रेज इस देश से चले गये पर अंग्रेजित नहीं गई। इसका कारण यह था कि प्रयत्नपूर्ण प्रचलित की गयी शिक्षा पद्धति ने लोगों के दिलों में, अंग्रेजी गुलामी को वरदान के रूप में स्वीकार किया, वही शिक्षा पद्धति थोड़े–बहुत संशोधन के साथ आज भी प्रचलित है। स्वामी विवेकानन्द ने इस प्रकार मस्तिष्क को तथ्यों के संग्रहालय की अपेक्षा व्यक्तित्व के निर्माण पर जोर दिया, उनकी मान्यताओं मे शिक्षा अर्थ, केवल जानकारी इक्ट्ठी करना नहीं दिशा ग्रहण करना है। उच्च शिक्षा भी इस प्रकार की हो कि साधारण जनता में जागृति आए और समाज के लिए स्वार्थ त्याग की मनोवृत्ति का विकास हो, यही वास्तविक शिक्षा है।

इस प्रकार हमें शिक्षा को उच्च स्तर का बनाने के लिये, शिक्षित लोगों को भी अपने नये मानदण्ड निर्धारित करने होंगे, क्योंकि जो शिक्षा व्यवस्था हमने अभी तक प्राप्त किया है उसके रहते हुए यदि अपना व्यक्तित्व, चरित्र, सामाजिक कल्याण व राष्ट्रीय हित में समर्पित नहीं कर सके, तो अशिक्षित पढ़े लिखे होने का दोहरा कलंक लगेगा। इसलिये

जैसे भी हो भारत के प्राचीन गौरव और अपनी संस्कृति की गरिमा को पुनः स्थापित करने के लिये जैसे भी संभव हो शिक्षा के सार्थक स्वरूप स्थापित करने का ठोस प्रयत्न किया जाए।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. आधुनिक भारतीय शिक्षा, जुलाई 2002, एन. सी.ई.आर, टी,, नई दिल्ली।
2. विकास का समाजशास्त्र, डॉ. के.के.मिश्र, भवदीय प्रकाशन, अयोध्या।
3. भारतीय शिक्षा का विकास एवं सामयिक समस्याएं,डॉ. मालती सारस्वत, आलोक प्रकाशन, प्रयागराज ।
4. उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षा, प्रो. रमनबिहारी लाल, लाल बुक डिपो, मेरठ।

*****